सामाजिक न्याय और डॉ. अंबेडकर : शोषितों के लिए आशा की एक किरण

[1]डॉ. राजेन्द्र कुमार गोठवाल

शोध सारांश

भारत की महान भूमि ने अनेकों ज्ञानियों, संतों और राजनेताओं को अपनी गोद में पाला है किन्तु इनमें से कुछ ही लोग ऐसे हैं जिन्होंने अपने अथक सद्कर्मों के कारण इतिहास के पन्नों में अमरता हासिल की है। आज भी ऐसे लोग मानव की स्मृतियों में किंवदंतियों के रूप में अदम्य रूप से जीते हैं। इनमें से एक है डॉ. भीमराव अंबेडकर।

कहा जाता है कि कमल कीचड़ में खिलता है। काले बादलों में से ही प्रकाश की किरणें निकलती हैं। मोती सीप में से ही जन्म लेता है। जुगनू रात में ही चमकते हैं और अंधकार का नाश करते हैं। इसी प्रकार महान व्यक्तित्व का जन्म भी अंधेरों के साये में होता है। वे अपने कार्यों और विचारों से अंधेरों का नाश करते हैं। ऐसी ही एक चाँद की चमकती रात में 14 अप्रैल 1891 को एक अछूत महार जाति में सूबेदार रामजी सकपाल और भीमा बाई के घर में एक पुत्ररत्न का जन्म हुआ जिसने भारत के इतिहास को एक नई दिशा और दशा प्रदान की। डॉ. अंबेडकर ने भारत में न केवल करोड़ों लोगों के जीवन को नई दिशा प्रदान की बल्कि भारतीय राजनीतिक व्यवस्था को भी नवीन रूप प्रदान किया। भारत में स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व डॉ. अंबेडकर की वाणी के पर्याय बन चुके हैं। भारत में डॉ. अंबेडकर दलितों, महिलाओं, श्रमिकों और किसानों आदि शोषित लोगों के लिए एक आशा की एक किरण है।

मूल शब्द : शोषित, सामाजिक, आर्थिक, संविधान, न्याय, दलित

सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान , राजकीय स्नाकोत्तर महाविद्यालय, गोविंदगढ़ (अलवर) राज.

प्रस्तावना

भारत में भिन्न-भिन्न धर्मों, संप्रदायों, वर्गों और जातियों के लोग निवास करते हैं। इन सभी लोगों की रूचियाँ, खान-पान, पहनावा, रीति-रिवाज और परंपराऐं भी विभिन्न हैं। जिसके कारण भारत में मानवीय भेदभाव पाया जाना स्वाभाविक है। हालांकि मानवीय भेदभाव विश्व के लगभग सभी देशों में पाया जाता है किंतु भारत में पाया जाने वाला भेदभाव कुछ रूप में शायद ही दुनिया के किसी भी देश में पाया जाता हो।

इस भेदभाव के पीछे प्रकृति नहीं, बल्कि मूल रूप से शोषण का षडयंत्र है। इस षडयंत्र को बड़ी चालाकी से सामाजिक नियमों में तब्दील कर दिया गया। जिसके कारण भारतीय समाज में शोषण और अन्याय की विकट समस्या उत्पन्न हो चुकी है। इन प्राचीन सामाजिक-नियमों को समाप्त करना इतना आसान नहीं रहा। ऐसा नहीं है कि किसी व्यक्ति ने इन समस्याओं के विरुद्ध आवाज नहीं उठाई। भारत में अनेक संत, ऋषि, मुनि, सामाजिक कार्यकर्ता अवतरित हुए जिन्होंने इन समस्याओं के विरुद्ध खड़े होने का साहस किया, लेकिन वे सामाजिक नियमों के जटिल बंधनों को तोड़ने में असफल रहे। हो सकता है उनकी इस सफलता के पीछे स्वसमाज की भावना रही हो जिसका व्यावहारिक विरोध करने में वे अपने आपको प्रतिबद्धित नहीं कर पाये हों। पीड़ा का एहसास चोट लगे व्यक्ति को होता है, न कि उसका उपचार करने वाले चिकित्सक को। उनका सामाजिक संघर्ष अन्य महापुरुषों की अपेक्षा अधिक सफल रहा। जिसके कारण उन्हें भारत में 'सामाजिक न्याय के पितामह' की संज्ञा दी गई। आज भी सामाजिक शोषित वर्ग उन्हें अपने उद्धार में प्रकाश बिन्दु दिखाई पड़ते हैं।

अछूतों का उद्धार एवं सामाजिक न्याय

प्राचीन भारत की एक गौरवपूर्ण संस्कृति रही है किन्तु अन्याय का कलंक भी जुड़ा है। भारत में एक ऐसी सामाजिक प्रथा पाई जाती है जो दुनिया के किसी भी देश में नहीं पाई जाती। इस दूषित प्रथा को अस्पृश्यता के नाम से जाना जाता है। यह तथ्य सत्य है कि विश्व के सम्पूर्ण देशों में मानवीय भेदभाव पाया जाता है। भारत में पाया जाने वाला भेदभाव मानवता के शोषण की पराकाष्ठा के स्तर को लांघ जाता है। जानवरों को देवता मानकर पूजे जाने वाली धरती पर मानव की चीत्कार अनायास ही सुनी जा सकती है। यहाँ वर्ग विशेष से सभी सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक अधिकारों को छीन लिया गया था और यदि कोई इस प्रथा के विरूद्ध जाने का प्रयास करता तो अंग-भंग करना सामान्य सा कार्य था। जीवन के अधिकार तक को छीना जाना कोई बड़ी बात नहीं थी। इस दयनीय स्थिति पर ईश्वर भी मूक था। ईश्वर भी केवल शोषक वर्ग के नियंत्रण में था। भारत में अनेकों ऋषि, मुनि, संत, महात्मा और ज्ञानी अवतरित हुए परन्तु उन्होंने सैद्धान्तिक रूप से घोषणा की कि ''सभी मानवों को ईश्वर ने बनाया है'' लेकिन यह कहने का साहस किसी ने नहीं किया कि ''सभी मानव समान है।''

हजारों वर्षों के पश्चात् दलितों की पीड़ा हरने वाले तारणहार के रूप में डॉ. अंबेडकर का अवतरण हुआ। डॉ. अंबेडकर को अपने वर्ग की पीड़ा का व्यावहारिक अनुभव था। अपने बाल्यकाल से ही उन्हें अपने वर्ग की पीड़ा का गहरा अनुभव था। यही कारण है कि उन्होंने संकल्प लिया कि ''यदि मैं अपने वर्ग की पीड़ा को समाप्त नहीं कर पाया तो मैं अपने आपको गोली मार लूंगा।''[1] अपने संकल्प के पथ पर बहिष्कृत हितकारिणी सभा'' के माध्यम से सर्वप्रथम रचनात्मक कार्य करते हुए अछूतों के लिए विद्यालय, पुस्तकालय, क्रीड़ा मैदान, छात्रावास आदि कार्यों को व्यावहारिक अंजाम दिया।[2] अपने अछूतोद्धार को बढ़ाने के लिए मूकनायक, सरस्वती विलास, बहिष्कृत-भारत, समता और जनता जैसे समाचार-पत्रों का प्रकाशन प्रारम्भ किया। जिनमें अछूतों की दयनीय स्थिति और भारत में प्रचलित दोषपूर्ण प्रथाओं का उल्लेख होता था ताकि सरकार और भारत की

जनता अछूतों की पीड़ा का मर्म जान सके। उन्होंने 1927 में महाड़ आंदोलन के माध्यम से ''जल पर सबका अधिकार'' पवित्र उद्देश्य और शांतिपूर्ण तरीके से चावदार तालाब से पानी पीकर जल सत्याग्रह का संचालन किया। एक लंबे कानूनी संघर्ष के पश्चात् 17 मार्च 1936 में अछूतों को पानी पर अधिकार दिलवाने में सफलता अर्जित की।''[3] डॉ. अंबेडकर का उच्च वर्णों से सीधा संघर्ष का यह प्रथम आगाज था जिसने अछूतों में स्वाभिमान जागृत किया।

अगला चरण उनका ''ईश्वर सबका है।'' हेतु मन्दिर प्रवेश सत्याग्रह शुरू किये। जिनमें नासिक के ''कालाराम मन्दिर'' सत्याग्रह प्रमुख है और एक लम्बे संघर्ष के पश्चात् 1935 में दलितों के लिए भी मन्दिर के दरवाजे खुल गये।''[4] गौरतलब यह है कि अछूतों के मन्दिर प्रवेश में सिक्खों ने साथ दिया वो इस मुद्दे पर अछूतों के लिए गांधी से समर्थन मांगने गये। तब गांधी जी का उत्तर बड़ा आश्चर्यजनक था। गांधीजी ने कहा कि ''सत्याग्रह विदेशियों के विरूद्ध किया जाना चाहिए ना कि अपने देश के लोगों के विरूद्ध।''[5]

डॉ. अंबेडकर मन्दिर सत्याग्रह में सफलता प्राप्त कर चुके थे। वे समझ चुके थे कि स्वर्ण हिन्दू कट्टरपंथियों से धार्मिक अधिकार प्राप्त करने के लिए अपनी शक्ति व्यर्थ नहीं करेंगें। अतः उन्होंने अपने वर्ग को संदेश देते हुए कहा कि ''अब दलितों को मन्दिर-प्रवेश जैसे सत्याग्रह में उलझकर अपना कीमती समय बर्बाद नहीं करना चाहिए। हमें अपनी शक्ति खाना, कपड़ा, मकान, शिक्षा, सम्मान, स्वास्थ्य रक्षा की समानता और राजसत्ता के लिए राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति हेतु लगानी चाहिए।''[6] अभी तक डॉ. अंबेडकर के द्वारा महाड़ सत्याग्रह में मनुस्मृति दहन और जल पर अधिकार, मन्दिर प्रवेश आंदोलन ब्राह्मणवादी सत्ता के विरूद्ध सामाजिक स्वतंत्रता का प्रतीक थे। किन्तु साइमन कमीशन के समक्ष साक्ष्य और गोलमेज सम्मेलनों में दलितों के लिए पृथक मताधिकार की मांग उनके द्वारा राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति हेतु किये गये संघर्ष का प्रतीक था।

डॉ. अंबेडकर ने 1930 से 1932 तक इंग्लैण्ड में संपन्न हुए गोलमेज सम्मेलनों में दलित प्रतिनिधि बतौर भाग लिया परन्तु गांधी जी डॉ. अंबेडकर की दलित प्रतिनिधि की भूमिका को नकार रहे थे। गांधी जी ने डॉ. अंबेडकर द्वारा दलितों के लिए पृथक मताधिकार की मांग का पुरजोर विरोध किया। अंबेडकर बनाम गांधी संघर्ष में डॉ. अंबेडकर विजयी हुए। इस सफलता के पश्चात् डॉ. अंबेडकर दलितों के निर्विवाद नेता सिद्ध हुए। हालांकि डॉ. अंबेडकर की विजय को सितम्बर 1932 के प्रसिद्ध ''पूना पैक्ट'' के तहत गांधी जी ने बड़े ही नाटकीय और धूर्ततापूर्ण छल से छीनकर आरक्षण का झुनझुना थमा दिया गया। डॉ. अंबेडकर की जीवनी के लेखक धनंजय कीर लिखते हैं कि ''गांधी जी का यह कृत्य वैसा ही था जैसे इन्द्र ने कर्ण के कवच-कुण्डल धूर्तता से छीनकर उसे दुर्बल बना दिया, उसी तरह गांधी जी ने भी अस्पृश्य समाज के 'पृथक मताधिकार' के कवच-कुण्डल को छीनकर डॉ. अंबेडकर को दुर्बल बना दिया।''[7]

डॉ. अंबेडकर ने अपनी इस मनोस्थिति को व्यक्त करते हुए कहा था कि ''देश गांधी जी के अनशन से काँप चुका था और मुझ पर चारों तरफ से दबाव डाले जाने लगा ..... मैं दोहरे संकट में था। एक और सदियों से पीड़ित अछूतों के अधिकारों को छिना जाना था, दूसरी तरफ गांधी जी के प्राण बचाने का। यदि गांधी जी के प्राण चले जाते तो मुझ पर देश की शांति भंग करने वाला मानवता का शत्रु कहे जाने का कलंक लगता तो दूसरी और दलितों के लांछन का भागी होने का डर था। अतः मैनें बड़े व्यथित हृदय से गांधी जी की शर्तों का स्वीकार कर लिया।''[8]

अंबेडकर ने राजनीतिक अधिकारों के दूसरे चरण में 'स्वतंत्र मजदूर पार्टी' (1936) का गठन कर 1935 के अधिनियम के तहत केवल बम्बई विधानसभा हेतु चुनाव में भाग लिया। पार्टी के घोषणा-पत्र में भूमिहीन, गरीब किसानों, मजदूरों आदि की समस्याओं के समाधान का जिक्र था। डॉ. अंबेडकर की पार्टी ने 17 में से 15 पर विजय हासिल की। उन्होंने बम्बई विधानसभा की कार्यवाहियों में बड़ी ही रुचि और सक्रियता से भाग लिया और ''खोती-प्रथा'' जैसी समस्याओं के समाधान हेतु संघर्ष किया।''[9] राजनीतिक अधिकारों के अंतिम पड़ाव में डॉ. अंबेडकर की भूमिका स्वतंत्र भारत के विधि-निर्माता के रूप में रही। संविधान-निर्माता के रूप में उन्होंने संविधान में पद-दलित महिलाओं, श्रमिक आदि के संबंध में क्रांतिकारी प्रावधान किये जिसके कारण शोषितों की स्थिति में आश्चर्यजनक परिवर्तन देखने को मिलता है।

स्त्रियों के मुक्तिदाता के रूप में डॉ. अंबेडकर

भारत में दलितों की भाँति महिलाओं की स्थिति भी शोषित और शोचनीय थी। भारत में महिलाओं को जहाँ देवी मानकर पूजा जाता है, वहीं दूसरी तरफ उनकी व्यावहारिक स्थिति पैरों की जूती के समक्ष थी। सैकड़ों ऋषि, मुनि, ज्ञानी, संत आदि भारत में अवतरित हुए परन्तु महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं आया। भारत में कुछ उच्च वर्ण की महिलाओं की अच्छी स्थिति का बखान भारतीय इतिहास में पढ़ाया जाता है। आधी आबादी की दशा कुछ महिलाओं की स्थिति से ढक पाना संभव नहीं था। भारत में दलितों के तारणहार डॉ. अंबेडकर ही 'महिलाओं के मुक्तिदाता' बने। जिनके अथक व्यावहारिक संघर्ष से स्वतंत्र भारत में महिलाओं की उन्नति के पंख लगे। उन्होंने दलित विमुक्ति के दौरान शिक्षा, समता और सम्मान का पाठ पढ़ाते हुए कहा कि ''शिक्षा जितनी पुरूषों के लिए जरूरी है, उतनी ही महिलाओं के लिए भी अनिवार्य है। पढ़ी-लिखी महिला परिवार की उन्नति का मार्ग होती है। बच्चों का भविष्य माँ से ही निश्चित होता है इसलिए स्वयं शिक्षित होकर न केवल अपने जीवन के तरीके को उन्नत करो बल्कि अपनी संतानों को सच्चरित्र बनाकर इतिहास में अपने पदचिह्न छोड़ जाओ।''[10]

भारत के संविधान में महिलाओं के लिए किये गये प्रावधान प्रसूति अवकाश, समान शिक्षा, समान वेतन आदि प्रावधान उन्हीं के सद्प्रयासों का नतीजा है। डॉ. अंबेडकर महिलाओं की स्थिति सुधार हेतु संविधान में किए गए प्रावधानों से संतुष्ट नहीं थे। उन्होंने 'हिन्दू कोड बिल' की रचना करके महिलाओं की स्थिति में क्रांतिकारी सुधार करने का प्रयास किया परन्तु सनातनी

कट्टरपंथियों को 'महिला विमुक्ति' पसंद नहीं थी। उन्होंने डॉ. अंबेडकर के बिल का संसद और संसद के बाहर विरोध किया। देश के प्रथम प्रधानमंत्री स्वयं प्रगतिशील विचारों के होने के पश्चात् भी कट्टरपंथी हिंदुओं के समक्ष बौने सिद्ध हुए। डॉ. अंबेडकर अपने पवित्र उद्देश्य में विफल हो गये और नेहरू मंत्रिमण्डल से त्याग-पत्र दे दिया। ''1956 में नेहरू सरकार ने कटा-फटा हिन्दू कोड बिल संविधान में चार भागों में शामिल किया, जिसके परिणामस्वरूप महिलाओं की उन्नति के मार्ग कुछ हद तक खुले।''[11]

कृषक समस्या और अंबेडकर

डॉ. अंबेडकर भारत में कृषि क्षेत्र में दोषपूर्ण भूमि व्यवस्था को भारतीय अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन से जोड़ते हैं। वे दूषित भूमि व्यवस्था से कृषकों की दयनीय और शोषणकारी स्थिति से चिंतित थे। उनके अनुसार ''सामान्यतः उच्च जातियाँ ही कृषि भूमि के स्वामी और जमींदार रहे हैं। मध्यम जातियाँ बँटाई पर खेती करती हैं और नीची जातियाँ भूमिहीन श्रमिक के रूप में कार्य करती हैं। जिनका शोषण बड़े पैमाने पर होता आ रहा है। यह समस्या सामाजिक असमानता उत्पन्न करती है।''[12]

कोंकण क्षेत्र में प्रचलित 'खोती प्रथा' की समाप्ति के लिए भारत में सर्वप्रथम किसानों की आवाज डॉ. अंबेडकर के नेतृत्व में उठी। उनकी मांग थी- जिस धरती पर वे हल चलाते हैं, उस पर उनको स्वामित्व मिले।[13] 1937 में डॉ. अंबेडकर द्वारा 'खोती प्रथा' की समाप्ति के लिए बम्बई विधानसभा में विधेयक प्रस्तुत किया किन्तु सरकार के असमर्थन के कारण विधेयक पर विचार न हो सका परन्तु डॉ. अंबेडकर के कुशल नेतृत्व में किसानों का समूह बम्बई की सड़कों पर आ गया। सरकार को झुकना पड़ा और उनकी मांगों को मानने का आश्वासन दिया। डॉ. अंबेडकर आश्वासन तक ही सीमित नहीं रहे बल्कि भविष्य में शोषण के विरूद्ध किसान और मजदूरों के जातिविहीन, वर्गविहीन सुदृढ़ संगठन की आवश्यकता के साथ विधायिका में किसान और मजदूरों के प्रतिनिधि चुने जाने जाने की वकालात की। उन्होंने 18 अगस्त 1925 को ''किसानों का सवाल'' शीर्षक से एक लेख प्रकाशित करवाया जिसमें उन्होंने कहा कि ''किसानों की भलाई के लिए भूमिकर को आयकर के कानून के अधीन लाया जाए।''[14] किन्तु उनके विचारों को अनदेखा कर दिया गया।

औद्योगिक श्रमिक और डॉ. अंबेडकर

डॉ. अंबेडकर श्रमिकों की दयनीय स्थिति से परिचित थे। उन्हें पता था कि मजदूरों के घरों में सप्ताहभर का राशन भी मुश्किल से होता था। वर्ष 1928-29 में कपड़ा-मिल मजदूरों की हड़ताल हुई और यह हड़ताल चले छः माह से भी अधिक हो चुके थे। इतनी लम्बी अवधि की हड़ताल से श्रमिकों की पारिवारिक स्थिति अत्यंत शोचनीय हो चुकी थी। डॉ. अंबेडकर श्रमिकों की हितों की लड़ाई में शरीक हुए। अंबेडकर श्रमिकों के हड़ताल के अधिकार को मान्यता देते थे किन्तु उनका मत था कि ''हड़ताल पर जाने का श्रमिकों का अधिकार है किन्तु हड़ताल के अधिकार का प्रयोग बहुत सावधानी से किया जाना चाहिए। हड़ताल के साधन

का प्रयोग करते समय श्रमिकों की स्थिति न बिगाड़ते हुए परिवर्तन उचित है अर्थात् रोगी की तबीयत अधिक बिगड़ने से पूर्व ही इलाज किया जाना चाहिए।''[15]

डॉ. अंबेडकर ने साइमन कमीशन के समक्ष दलित श्रमिकों की स्थिति को प्रस्तुत किया। वहीं 1938 में बम्बई विधानसभा में मजदूरों के विरोधी विधेयक ''इण्डस्ट्रियल डिस्प्यूट बिल'' का जमना दास मेहता के साथ पुरजोर विरोध करते हुए कहा कि ''हड़ताल करना सिविल राँग है किन्तु अपराध नहीं। किसी व्यक्ति की इच्छा विरूद्ध काम लेना, दास बनाने से कम नहीं है।''[16] उन्होंने श्रमिकों के हित में बोलते हुए कहा कि ''सरकार को मजदूरों के हित एवं भलाई को ध्यान में रखना चाहिए न कि जिनके पेट भरें हो और उनकी कमीज के बटन उनकी तोंद को छूते हो, ऐसी शांति जिसमें मजदूरों को मालिक की जंजीर में बांध दिया जाए सर्वथा अनुचित है।''[17]

डॉ. अंबेडकर ने अपनी पुस्तक ''स्टेटस एण्ड माइनरोटिज'' में औद्योगिकरण के विकास को आवश्यक मानते हुए उद्योगों के राष्ट्रीयकरण का समर्थन किया। उन्होंने कहा कि ''उद्योग राज्य सम्पत्ति हो और उनमें कार्य करने वाले श्रमिकों की दशा सुधारने हेतु स्वास्थ्य, न्यूनतम वेतन, कार्य करने के घण्टे, विश्रामकाल, शौचालय एवं राष्ट्रीय बीमा जैसी सुविधाऐं नियमित हो।[18] परिणामस्वरूप न्यूनतम मजदूरी अधिनियम 1948 सामने आया। महिला श्रमिकों के लिए प्रसूति अवकाश आदि अधिनियम डॉ. अंबेडकर की मेहनत का परिणाम माना जा सकता है।

शोषित वर्ग की स्थिति का तथ्यात्मक विश्लेषण

आज देश को आजाद हुए 74 वर्ष हो चुके हैं परन्तु शोषित वर्ग (दलित, महिलाऐं, बच्चे आदि) का शोषण और अत्याचार रुकने का नाम नहीं ले रहा है। भारत में इन वर्गों पर अत्याचार रोकने के लिए अनेकों संवैधानिक और कानूनी संरक्षण अधिनियम मौजूद हैं। इन सबके बावजूद इन वर्गों पर अत्याचार की भयावह तस्वीर हमारे राष्ट्र को शर्मसार करती नजर आती है। राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो द्वारा वर्ष 2019 में जारी रिपोर्ट के मुताबिक साल 2019 में अनुसूचित जातियों के साथ अपराध के मामलों में 7.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जहाँ वर्ष 2018 में 42,793 मामले दर्ज हुए वहीं 2019 में 45,935 मामले सामने आये। इनमें सामान्य मारपीट के 13,273 मामले, 4,129 मामले अनुसूचित जाति/जनजाति अधि. के तहत और 3,486 मामले बलात्कार के दर्ज हुए हैं। इसी प्रकार अनुसूचित जनजातियों के विरूद्ध अपराध 2018 की तुलना में 26.5 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। 1 अक्टूबर, 2020 को प्रकाशित दैनिक समाचार पत्र 'अमर उजाला' के अनुसार ''देश में प्रतिदिन 87 दुष्कर्म हो रहे हैं। 2018 की तुलना में 2019 में 7.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।'' इसी प्रकार एन.एस.आर.बी. की रिपोर्ट के अनुसार ''2018 की तुलना में बच्चों के खिलाफ अपराध की संख्या में 4.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।[19] दलितों के प्रति अपराध में राजस्थान, गुजरात, उत्तर प्रदेश, बिहार, हरियाणा, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र अग्रणीय राज्य है।

राष्ट्रीय क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो जो गृहमंत्रालय के अधीन कार्य करता है। इसकी उपरोक्त रिपोर्ट के कुछ आंशिक बिन्दु शोषित वर्ग के शोषण-अत्याचार की कहानी चीख-चीखकर बता रहे हैं। हमें इन पर विश्वास करते हुए मानना होगा कि ''शोषित वर्गों की समस्या कानूनी नहीं बल्कि सामाजिक समस्या है। हमें मानना ही होगा कि अभी भारत में उच्च वर्ग शोषितों को अपनाने से परहेज करते हैं। वर्तमान में इस परहेज का कारण शोषित वर्ग में उत्पन्न चेतना और उन्नति को भी माना जा सकता है। दलित चिंतक चन्द्रभान प्रसाद इसका मुख्य कारण दलितों में उत्पन्न जागरूकता और मजबूती की कीमत बताते हैं। उनके अनुसार- ''पहले दलितों पर हिंसक हमले कम होते थे परंतु दस-पंद्रह सालों में जैसे-जैसे दलितों की तरक्की हुई है वैसे-वैसे उन पर हमलों की तीव्रता बढ़ी है। यह कानूनी समस्या नहीं बल्कि सामाजिक समस्या है।''

निष्कर्ष

सामाजिक न्याय और डॉ. अंबेडकर को एक-दूसरे का पर्याय कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। उन्होंने दबे-कुचले लोगों में चेतना का विकास किया। सामाजिक समानता, स्वतंत्रता और भ्रातृत्व जैसे शब्दों का विचार आते ही डॉ. अंबेडकर का चित्र साकार हो उठता है। यही कारण है कि लोगों ने उन्हें भारत का अब्राहम लिंकन, टी. वांशिगटन, 'मार्टिन लूथर' जैसी उपाधियों से विभूषित किया। निःसंदेह आज भारत में ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व में शोषित वर्गों की भलाई के कारण उन्हें याद किया जाता है। उनके उद्‌गार ''मैं गरीबों के बीच पला-बढ़ा। उनके बीच रहा। उनकी तरह ही सीलन भरी फर्श पर टाट के बिछौने पर सोया और उनके सुख-दुख में भागीदार रहा। अब भी मेरे व्यवहार और सोच में कोई अन्तर आने वाला नहीं है, न अपने लोगों के प्रति, न मित्रों के प्रति, न दुनिया के प्रति। मेरे दिल्ली के मकान के दरवाजे सदा सभी के लिए खुले हैं।[20] यही कारण है कि डॉ. अंबेडकर भारत में शोषित वर्गों की एक आशा की किरण के रूप में दिखाई देते हैं।

संदर्भ सूची

1. बैरवा, पी.एम., अंबेडकर और दलितोद्धार आंदोलन, आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स जयपुर, 2009, पृ.108
2. हर्ष, हरदान, डॉ. भीमराव अंबेडकर जीवन-दर्शन, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2009 पृ.सं. 18
3. वही पृ. 22-24
4. वही पृ .32
5. वही पृ. 32
6. वही पृ. 33
7. कीर, धनंजय ''डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर'' जीवन-चरित, पाप्युलर प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृ. 208

8. वही पृ. 207

9. हर्ष, हरदान ''डॉ. भीमराव अंबेडकर जीवन-दर्शन, पंचशील प्रकाशन, 2009, पृ. 72

10. वही पृ. 20

11. कुबेर, एन डब्ल्यु ''आधुनिक भारत के निर्माता, भीमराव अंबेडकर, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, दिल्ली, 2013, पृ. 57

12. ओझा, बी.एल. ''भारतीय आर्थिक चिंतन, रमेश बुक डिपो, जयपुर, 2007, पृ. 165

13. हर्ष, हरदान, पृ. 27